शोध मंथन, Impact Factor 5.463 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255, (e) : 2454-339X,
66 Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com/* https://doi.org/10.31995/shodhmanthan

नारी विमर्श : 21 वीं सदी में नारी की दशा और दिशा

डॉ0 पूजा रानी,
सहा0 प्रोफे0, हिन्दी विभाग,
के.वी.ए.,डी.ए.वी. कॉलेज फॉर वूमैन,करनाल
poojaraniramesh@gmail.com

सारांश

नारी समस्त सृष्टि की मूलाधार है। सघन शक्ति का पुंज है। नारी बहन, माता, पत्नी सभी रूपों में गौरवान्वित रही। हमारा हिन्दी साहित्य स्त्री विमर्श में न जाते कितनी ही विरोधाभासी अमर उक्तियों से भरा पड़ा है। जैसे–"नारी तुम केवल श्रद्धा हो....." ढ़ोल गँवार शूद्र पशु नारी सकल ताड़ना के अधिकारी, "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" इतिहास साक्षी है कि नारी ने प्राचीन काल से लेकर आज तक कदम–कदम पर माँ, बहन पुत्री, पत्नी एवं सखा रूप में समाज को आगे बढ़ाते रहने में सक्रिय एवं सकारात्मक भूमिका निभाई है। परन्तु 21वीं शती के भारत की परिस्थितियों को देखते हैं तो मन विचलित हो उठता है। जहाँ आज की स्त्रियाँ, जहाँ विभिन्न क्षेत्रों में पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ रही हैं। वही महिलाओं के प्रति अपराधों में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि हो रही है। नारी के कोख में ही मार डालने का षडयंत्र रचा जा रहा है। दहेज प्रताड़ना घरेलू हिंसा यौन शोषण, महिला तस्करी जैसे अपराधों से सभ्य समाज उदेलित हो रहा है हालांकि इन अपराधों पर नियंत्रण के प्रति प्रशासनिक स्तर एवं सामाजिक संगठनों के द्वारा निरंतर प्रयास जारी है।

प्रस्तावना

'शृंखला की कड़िया' को निःसंदेह स्त्री–विमर्श की पहली गंभीर पुस्तक माना जाना चाहिए। इसका प्रथम प्रकाशन भले ही सन् 1942 में हुआ, इसमें लेखिका द्वारा लिखित निबंध सन् 1930 से लेकर सन् 1937 तक के हैं। कुल 18 निबंधों में कुछ तो एकदम आह्वान शैली में हैं। समाज में स्त्री की विषम स्थिति देखकर महादेवी जी का व्यथित हो उठना उनकी विकसित सामाजिक चेतना का परिचय देता है।

उन्हें उम्मीद है कि "भारतीय नारी भी जिस दिन अपने पूरे प्राण–प्रवेग से जाग सके उस दिन उसकी गति रोकना किसी के लिए संभव नहीं" यह काम सरल नहीं है लेकिन इसका सूत्रपात करना होगा, यह महादेवी समझती हैं। इसीलिए पहले निबंध से ही वे उस समय के स्त्री–समाज को जगाने का, झकझोरने का काम हाथ में लेती हैं। वे परिवेश पर जोर देती हैं, 'पुरुष के समान स्त्री भी कुटुंब, समाज, नगर तथा राष्ट्र की विशिष्ट सदस्य है तथा उसकी प्रत्येक क्रिया का प्रतिफल सबके विकास में बाधा भी डाल सकता है और उसके मार्ग को प्रशस्त भी कर सकता है।

लेकिन इक्कीसवीं शताब्दी का साहित्य अपने नाम से आधुनिक प्रतीत होता है। सभ्यता के धरातल पर यह सत्य भी है परन्तु नारी और विशेष रूप से भारतीय नारी के सन्दर्भ में यह बात खरी नहीं उतरती। आज के समाचार पत्र, पत्र–पत्रिकाओं, फिल्म, दूरदर्शन और समाज में घट रही घटनाओं को देखकर लगता ही नहीं कि यह आज का सभ्यतम–विकसित समाज है, वरन् उनकी मानसिकता आदिम युग के बर्बर मानव की है।

समकालीन रचनाकारों ने (जिनमें स्त्री और पुरुष दोनों ही रचनाकार है) ने नारी के जीवन के विविध पहलुओं और उनकी समस्याओं को बहुत संवेदनशील और प्रामाणिकता के साथ चित्रित किया है। भारतीय समाज में नारी की स्थिति दोयम दर्जे की है। जन्म से उसकी परवरिश इसी प्रकार की जाती है। हमारे जेहन में बचपन से ही यह बात बैठा दी जाती है कि लड़की का काम क्या है? सीमा क्या है? कर्त्तव्य क्या है? उसको किस मर्यादा का पालन करना चाहिए? आचरण कैसा होना चाहिए?

नारी की वर्तमान स्थिति की आज के रचनाकारों ने बहुत तार्किक अभिव्यक्ति की है। आधुनिकता से युक्त इस परिवेश में जहाँ रिश्तों, भावनाओं और मूल्यों का विघटन होता जा रहा है, "यौन–कुण्ठा" एक बड़ी समस्या है। कुण्ठित मानव मन अपराधिक प्रवृत्ति का होता जा रहा है। उचित अनुचित से परे पुरुष का वहशीपन अनेक बार भोली–भाली, पढ़ी–लिखी, तेज–तर्रार या सामान्य लड़की के लिए भयावह अन्त सिद्ध होता है। 'तिरिया चरित्तर' (शिवमूर्ति) कहानी हो अथवा 'गंगा जी के निर्मल धार' (विभारनी) आत्मविश्वास से भरी तेज तर्रार लड़की जो शादी के पूर्व अपने माँ–बाप का सहारा बनती है, काम करती है, घर सँवारती है उनकी देखभाल करती है। अचानक विवाह के पश्चात् ससुराल पहुँचते ही दीन–हीन, बेसहारा और दयनीय हो जाती है। इसमें संदेह नहीं कि इसका कारण भी हमारे संस्कार और हमारी परवरिश ही हैं। स्त्री की दुर्दशा का कारण स्वयं स्त्री ही है। अंजू दुआ जैमिनी के शब्दों में "बचपन में सशक्त दिखने वाली लड़कियाँ औसत होने पर कमजोर क्यों हो जाती हैं ? उनका आत्मविश्वास इतना ढल क्यों जाता है? क्योंकि उन पर समाज का दबाव बढ़ जाता है। निर्भीक, साहसी लड़की बड़ी होकर एक पत्थर की मूर्ति में तबदील हो जाती है। यह खुद हमारी अपनी गलती है, हम खुद अपने डैने छाँट देते हैं।

भारतीय समाज में नारी की स्थिति में जाति और धर्म से कोई फर्क नहीं पड़ता। हर धर्म, हर जाति में नारी की स्थिति दोयम दर्जे की ही है। प्रख्यात रचनाकार नासिरा शर्मा इस्लाम में नारी की स्थिति का वर्णन करते हुए लिखती हैं–"मुस्लिम स्त्रियों की बदनसीबी है कि उनको अपने धर्म का पूरा ज्ञान नहीं होता फिर भी वह उस पर आँख मूँद कर विश्वास करती हैं क्योंकि उनको विरासत में यही मिला है कि धर्म के मामले में मौलवी साहब का और घरेलू मामले में शौहर का मानना ही, जन्नत जाने के दरवाजे की कुंजी है (नासिरा शर्मा)।

नासिरा जी आगे लिखती हैं कि "पति के विरोध में जाना गुनाह है खुदा उस औरत को माफ नहीं करता (नासिरा शर्मा)।"

इन साहित्यकारों ने नारी से जुड़ी समस्याओं का चित्रण ही नहीं किया है, वरन् उन समस्याओं की जड़ को पकड़ने का प्रयास भी किया है। प्रियंवदा के उपन्यास–'रूकोगी नहीं राधिका', 'भया कबीर उदास' आदि में नारी की मनोग्रन्थियों और मनोविकारों को समझने का प्रयास किया गया है। प्रख्यात आलोचक एवं स्त्री–विमर्श के समर्थक स्व. राजेन्द्र यादव नारी की समस्या की जड़ उसके घर और स्वत्व की पहचान में देखते हैं। राजेन्द्र जी के अनुसार नारी की देह केवल उसकी अपनी है और चूंकि अन्य कहीं कुछ (न घर, न धर्म, न जाति आदि) उसका नहीं हैं अतः वह अनवरत संघर्ष करती रहती हैं। राजेन्द्र जी स्पष्ट लिखते हैं–"स्त्री का न अपना घर है, न परिवार, न नाम है न पहचान, न उसकी कोई जाति है न धर्म, न उसकी भाषा अपनी है न भूषा–उसे सब कुछ पुरूषों ने ही दिये हैं–अगर वह इन सबको अस्वीकार कर दे तो उसका अपना कहने को कुछ भी नहीं है (राजेन्द्र यादव)।" सम्भवतः नारी की इन समस्याओं को नारी भी समझ रही है तभी तो आर्थिक, शैक्षिक, मानसिक रूप से सशक्त होने की बात कर रही हैं–तभी तो अनामिका, कात्यायिनी, गगन गिल, कविता भाटिया, जैसी अनेक उत्कृष्ट कवयित्रियाँ अपनी कविता के माध्यम से स्त्री को जागृत करने का प्रयास कर रही हैं–आज की नारी कैसी होनी चाहिए? सविता सिंह के शब्दों में

"मुझे यह स्त्री पसन्द है जो कहती है अपनी बात साफ–साफ
बेझिझक जितना कहना है बस उतना
निर्भीक जो करती है अपने काम
नहीं डरती सोचती हुई आत्मनिर्भरता पर अपने
.....
समझती हुई सारे घात प्रतिघात
खतरे सारे जीवन में
जो खुद से प्रेम करती है
और संसार के हर प्राणी से सहानुभूति रखती है (सविता सिंह)

21वीं सदी की नारी को स्वयं से सहानुभूति नहीं रखनी और दूसरों से प्रेम नहीं करना वरन् स्वयं से प्रेम और दूसरों से सहानुभूति रखनी है।

भविश्य के लिए विचार, सपनों और अतीत के दर्द के साथ 21वीं सदी का हिन्दी साहित्य हर घर में पाई जाने वाली सामान्य जीवनचर्या का प्रभावशाली चित्र भी उकेरता है। सुधा अरोड़ा की कहानी 'सत्ता संवाद' एक मध्यमवर्गीय पति–पत्नी के वार्तालाप को एकालाप शैली में अत्यंत प्रभावी रूप से प्रस्तुत करता है–"आ गए? यह लो खाली हाथ झुलाते आए। मैंने कुछ लाने को कहा था? याद नहीं रहा। कोई नई बात है? याद रहता कब है? अब मैं बाहर भी करूँ और घर का सारा जंजाल भी संभालू। मरने दो, मुझे क्या पड़ी है। मैं भी नहीं जाती। चलने दो घर जैसा चलता है (सुधा अरोड़ा)।

ऐसा नहीं है कि नारी की इन समस्याओं को दूर करने का प्रयास नहीं हुआ। कानूनी तौर पर पैतृक सम्पत्ति में अधिकार, तलाक का अधिकार, कन्या भ्रूण हत्या निरोधी कानून, घरेलू हिंसा सम्बन्धी कानून, शिक्षा और समानता का अधिकार, महिला सुरक्षा कानून जैसे अनेक उपयोगी कानून नारियों के लिए ही बनाये गए परन्तु उसका प्रभाव अभी भी पूरे समाज में नहीं पड़ा है। यद्यपि 21वीं सदी का समाज अधिक चेतन और जागरूक है तथापि अति पिछड़े इलाकों तक इस जागृति को पहुँचाने की आवश्यकता है।

नारीवाद नारी की उन परिस्थितियों को बदलने की बात करता है जिनके कारण उनके व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाया है और उन्हें वे अधिकार नहीं मिल पाते जो पुरुषों को प्राप्त है। नारीवादी नारी को बदलने की बात नहीं करता। भारत में इसकी उपयोगिता पर प्रश्न लगाने वाले तर्क देते हैं कि भारतीय नारी तो नारीत्व का, ममता का, करूणा का मूर्तिमान रूप है और पश्चिम की नारीवाद महिलायें उसे भी अपनी तरह भ्रष्ट कर देना चाहती है। दुनिया सिर्फ भारत अमेरिका या यूरोप की नहीं है। एशिया, दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका के भी देशों में महिलायें अपनी स्थिति बदलने की माँग कर रही है, परन्तु अपनी संस्कृति को बदलना नहीं चाहती। साड़ी या बुर्के को प्रश्न न बनाया जाए बल्कि यह विचार किया जाए कि महिलाये अपने को किसमें सुरक्षित महसूस करती हैं। उनके ऊपर बुर्के या साड़ी का पहनावा थोपा न जाए, बल्कि चयन का अधिकार औरत का हो और वह बिना दबाव के अपना निर्णय ले सके। भारत में नारी अपना नारी गुण बनाये रखना चाहती है तो नारीवाद उसे रोकता नहीं है अन्तर यह है कि उस पर ये गुण थोपा नहीं जाए। ये महिलाओं को चयन और निर्णय की स्वतन्त्रता प्रदान करता है।

शशिप्रभा शास्त्री के कथा साहित्य में नारी का दृष्टिकोण परिवर्तित हुआ है। उन्होंने प्रेम, विवाह, सैक्स, समलैंगिकता जैसे विषय को अपने कथा साहित्य में स्थान देकर प्राचीन मूल्यों मान्यताओं को नकारा है। अगर वे उन परम्परागत मूल्यों को चिपकाए रहती तो नारी की सोच, उसके विचारों में परिवर्तन सम्भव नहीं था। इसलिए उन्होंने मूल्यों, मान्यताओं को कम स्वीकार किया है। अगर 'नावें' उपन्यास की नायिका मालती परम्परागत मूल्यों को अपनाती तो सोमजी की रखैल बनकर जीवनयापन नहीं करती तो उसकी माता के कहे अनुसार कुएँ में कूदकर जान दे देती। कुँवारी माँ बनकर जीना मालती का मूल्यों के बदलाव की दिशा है। 'नावें' की नायिका मालती ने पुरानी मान्यता को बदला है और कुँवारी माँ बनना, गर्भपात न करवाना, नीलू का लालन–पालन करना, आत्मनिर्भर बनना व अन्त में विजयेश से विवाह करना पुराने मूल्यों को अस्वीकृति है जो समाज को दिशा–निर्देशित भी करती है कि ऐसी महिलाओं को भी जीने का अधिकार है। वे भी अपना जीवन–साथी चुन सकती हैं।

लेखिका ने लेखन के नये आयाम प्रस्तुत किए हैं। इनके कथा–साहित्य में नैतिकता के बन्धनों के कारण कामवासना का दमन करना पड़ता है। फलस्वरूप उनसे अनेक कुण्ठाओं का जन्म होता है। मनोवैज्ञानिक पक्ष के विविध पहलुओं, फ्रायड, एडलर, यंग आदि के प्रभाव के कारण काम इच्छा से लेकर अहम् जैसी मुख्य प्रवृत्तियों का विश्लेषण किया है। जैसे "वीरान रास्ते व झरना' की नायिका अचला माँ व चाचा के अवैध सम्बन्धों को देखती है तो हीनता ग्रन्थि की

शिकार हो जाती है और कहती है, "मैं एक गन्दी औरत की लड़की हूँ और बुरे बाप की बेटी हूँ। मैं हरगित कुलीन नहीं हो सकती।"

"उम्र एक गलियारे की उपन्यास की नायिका सुनंदा को तो लेखिका ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि पाप–पुण्य क्या है? इसका सम्बन्ध नैतिकता व अनैतिकता से अगर जोड़ा जावे तो आनन्द प्राप्ति कैसे हो? इसलिए परिस्थितिवश, संयोगवश, नियति के प्रभाव से मिल जाए तो उसका उपभोग करना क्या पाप है? नैतिकता के झूठे बन्धनों को ओढ़कर वर्जित फल कहकर आदमी को आनन्द का उपभोग करने से कतराना उचित है क्या? इसलिए सुनंदा प्रेमी से पूर्ण सैक्स–संतुष्टि प्राप्त करती है और प्रेमी देवेश से कहती है–"मेरा क्या और घर नहीं हो सकता? सोचो न देवश, तुमने मुझे राह दिखाई है, मुक्त किया है और तुम ही मुझसे दूर रहोगे।"

'अमलतास' उपन्यास की नायिका कामदा जो रजवाड़े में रहती है, हरदेवलाल जैसे पति को इस तरह फटकारती है, जिसकी तालू से चिपकी जुबान खुल नहीं पाई थी, पर आज कामदा आत्मनिर्भर है। उसकी जुबान इस तरह खुलती है–"मैं अब आपकी ब्याहता पत्नी नहीं हूँ परित्यक्ता हूँ। ब्याहता को आप कौड़ी को तरसायें, पर परित्यक्ता तो आपसे लड़कर अपना हिस्सा लेंगी।"

कामदा अपने अधिकारों के प्रति जागृत हो गई है। 'खामोश होते सवाल' की नायिका अनुराधा को भी पुरानी मान्यताओं के प्रति परिवर्तनशील बताया है। जब उसका पति केसरीराय, अपने पिता सेठ रूपचन्द की सेवा नहीं करता है तब सेठ रूपचन्द कहता है, "बेटे मेरा दाह–संस्कार मेरा यह बेटा करेगा ..... यही मेरा बेटा है, इसी ने मेरी देखरेख की है, तुमने तो मुझे सिर्फ जख्म दिए हैं।"

लेखिका ने अनुराधा के माध्यम से पुरानी मान्यता को नकारा है कि बेटा ही पिता का दाह–संस्कार करेगा। 'दो कहानियों के बीच' कहानी–संग्रह की गंध कहानी में भी लेखिका ने सुम्मी के माध्यम से बिल्कुल नये और 'बोल्ड' विचार रखे हैं। वह कहती हैं–"कितनी बार सोच चुकी है, स्त्रियों के लिए चकले या पुरुष–वेश्यालय क्यों नहीं हुए जहाँ वे भी स्वतन्त्रता से जा सकती हैं? पुरुष और स्त्री की नैतिकता के मानदण्डों में अन्तर क्यों? क्या स्त्री के मन नहीं है।"

इस प्रकार शशिप्रभा शास्त्री के कथा–साहित्य में नारी की सोच व मान्यताओं में बदलाव आया है। यह बदलाव शिक्षा के क्षेत्र में, सामाजिक क्षेत्र में आर्थिक क्षेत्र व राजनैतिक क्षेत्रों के साथ–साथ मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में भी बदलाव आया है। मध्यवर्गीय स्त्रियाँ अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक होने लगी हैं। उनमें वैचारिक स्वतंत्र शक्ति विकसित हुई हैं। शिक्षा के फलस्वरूप आधुनिक नारी में रूढ़ियों, कर्मवाद और भाग्यवाद, अन्धविश्वास, परम्पराओं के प्रति विश्वास कम हो गया फिर भी मध्यवर्गीय नारी का जीवन–दर्शन कहीं व्यक्तिवादी तो कहीं आदर्शवादी बना हुआ है। अहम् के प्राबल्य के कारण से स्त्री अपने व्यक्तित्व के प्रति जागरुक रहकर अपना मार्ग स्वयं तय करती है। इसलिए कर्मवाद की भाग्यवाद से टकराहट प्रारम्भ हो जाती है। नारी जीवन की इन विडम्बनाओं को शशिप्रभा शास्त्री के कथा–साहित्य ने बदलते प्रतिमान के रूप में व्यक्त किया है।

निष्कर्ष

समकालीन महिला रचनाकारों ने नारी की समस्याओं का मनोविश्लेषणात्मक विवेचन किया है। मैत्रेयी पुष्पा, प्रभा खेतान, अलका सरावगी, चन्द्रकान्ता, ममता कालिया, क्षमा शर्मा, नीलाक्षी सिंह, शशिप्रभा शास्त्री जैसी कथाकार तथा अनामिका, कात्यायिनी गगन गिल, रंजना, सविता सिंह जैसी अनेक कवयित्रियों ने अपनी रचनाओं में नारी का संवेदनशील, यथार्थ, प्रभावशाली और हृदयस्पर्शी चित्रण किया है। न केवल महिला अपितु राजेन्द्र यादव, रघुवीर सहाय, रामशरण जोशी, अरविन्द जैन, राजकिशोर लीलाधर मण्डलोई, मदन कश्यप आदि अनेक पुरूष रचनाकारों ने भी हिन्दी साहित्य में नारी की स्थिति का संवेदनशील और प्रभावशाली चित्रण प्रस्तुत किया है। वस्तुतः 21वीं शताब्दी के हिन्दी साहित्य में नारी की स्थिति का सम्पूर्ण, यथार्थ प्रामाणिक और भावात्मक निरूपण हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ

1. ममता कालिया, *स्त्री विमर्श का यथार्थ,* किताब वालेए 2015 पृष्ठ संख्या **2**
2. डॉ. विजयलक्ष्मी शर्मा व डॉ. सुकृति मिश्रा, *नारी चिन्तन के विविध आयाम,* पृष्ठ संख्या **73,75,76,78,174**
3. डॉ. अनिता शर्मा, शशिप्रभा शास्त्री के कथा–साहित्य में नारी, पृष्ठ संख्या 166, 167